ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

जस्सा सिंह (आहलूवालिया)

सिक्ख इतिहास, भाग–दूसरा

लेखक : स. जसबीर सिंघ

क्रांतिकारी जगत गुरू नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

Websie:www.sikhworld.info

or

Websie:www.sikhhistory.in

नोट : यहां दी गई सारी जानकारी लेखक के अपने निजी विचार हैं। यह जरूरी नहीं कि सभी लेखक के विचारों से सहमत हों।

जस्सा सिंह (आहलूवालिया)

दल खालसा के सेनानायक जस्सा सिंह आहलुवालिया के पूर्वज लगभग सोलहवीं शताब्दी ईस्वी में तरनतारन के निकट आ गये थे । सिक्ख पंथ के साथ उनका सम्बन्ध छठे गुरू श्री हरिगोबिन्द साहिब के समय से आरम्भ होता है । उन दिनों आपके पूर्वजों में सरदार साधू सिंह और उनके सुपुत्र गोपाल सिंह तथा उनके पौत्र देवा सिंह जी से चलता है । देवा सिंह जी कई बार अपने छोटे सुपुत्र बदरसिंह के साथ श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी के दर्शनार्थ आनन्दपुर आतेरहते थे । सन् 1699 की वैसाखी के पश्चात् उन्होंने भी हजूरी पाँच प्यारों से अमृत धारण किया । सरदार बदर सिंह जी सिक्ख सिद्धान्तों के प्रति अथाह आस्था रखते थे, उनके हृदय में गुरू के प्रति अटूट श्रद्धा थी ।

सरदार बदर सिंह जी का विवाह ग्राम हलो - साधो के सरदार बाहा सिंह जी की बहन के साथ सम्पन्न हुआ । इस देवी पर भी सिक्ख धर्म की मर्यादाओं का गहरा रंग चढ़ा हुआ था। वह सिक्ख धार्मिक ग्रन्थों में पूरी तरह रूचि रखती थी और उन्हें गुरवाणी बहुत अधिक कंठस्थ थी । गुरूवाणी के प्रति उनका लगाव और उनका सुरीला स्वर उन्हें कीर्तन नियमित रूप से करने में विवश करता था। अत: उन्होंने संगीत विद्या भी सीखी, जिससे वह दोतारा नाक वाद्ययंत्र बजाने में भी अत्यन्त प्रवीण हो गई । तीन मई 1718 ईस्वी को आप ने एक बालक को जन्म दिया। जिसका नाम जस्सा सिंह रखा गया । जब जस्सा सिंह चार वर्ष के हुए तो उनके पिता सरदार बदर सिंह का देहान्त हो गया । इस कारण जस्सा सिंह के पालन पोषण तथा घर बाहर के अन्य सभी कार्यो का सारा भार उसकी माता के कंधों पर आ पड़ा । माता के लिए यह बड़ा विकट समय था। एक ओर तो पति का साया सिर से उठ गया और दूसरी ओर मुगल सरकार भी सिक्खों के खून की प्यासी हो गई थी । किन्तु जस्सा सिंह की माता अडिग रही । वह पति की अकाल मृत्यु को वाहे गुरू का भाना समझकर अकाल पुरख की रज़ा और उसकी याद में जीवनयापन करने लगी ।

गुरू गोबिन्द सिंह जी के ज्योति - जोत समा जाने के पश्चात् माता सुन्दरी जी दिल्ली में निवास करने लगी। जस्सा सिंह के जन्म के उपरान्त उनकी माता को भी कई बार इस बात का ध्यान आया कि वह माता सुन्दर कौर जी से बेटे को उनसे मिलवाये। दैवयोग से उसके

भाई बदर सिंह ने सन् 1723 ईस्वी में दिल्ली यात्रा का कार्यक्रम बनाया । वह अपने साथ जस्सा सिंह और उसकी माता को भी साथ ले गया । माता सुन्दर कौर जी बालक जस्सा सिंह और उसकी माता के सुरीले कंड से गुरवाणी का कीर्तन सुनकर मुग्ध हो गई । अत: उन्होंने माँ पुत्र को बदर सिंह से आग्रह करके अपने पास ठहरा लिया । प्रतिभावान जस्सा सिंह ने माता जी का मन मोह लिया और माता जी की जी - जान से सेवा की, जिस कारण जस्सा सिंह उनकी विशेष कृपा का पात्र बन गया ।

सरदार बाघ सिंह स्वयं निस्संतान था । अत: वह अपनी बहन के पुत्र जस्सा सिंह के प्रति अत्यन्त स्नेह करता था और जस्सा सिंह के माध्यम से सन्तान सुख का मानसिक सन्तोष प्राप्त करने की अभिलाषा रखता था ।

सन् 1729 ईस्वी में बाघ सिंह एक बार फिर दिल्ली गया । उसने इस बात बड़े नम्रतापूर्ण शब्दों में माता सुन्दर कौर जी से अपनी बहन और भानजे को पँजाब लौटने के लिए आज्ञा देने की प्रार्थना की । यद्यपि माता सुन्दरी जी अति श्रद्धावान माँ - पुत्र से विछोह नहीं चाहती थी । तब भी उन्होंने उन दोनों को पंजजाब जाने की सहमति दे दी । विदाई के समय माता जी ने जस्सा सिंह को उपहार में एक कृपाण, एक गुरज (गदा), ढाल, कमान, तीरों से भरा भक्षा (तर्कश), एक सैनिक पोशाक और एक चाँदी की बनी चौब प्रदान करके आशीर्वाद दिया । समय आयेगा जब तेरे नाम अनुसार तेरा यश (कीर्ति) चारों ओर फैलेगा । कालान्तर में ईश्वर की कृपा से माता सुन्दर कौर जी की आशीष खूब फलीभूत हुई । उन दिनों मुगल सरकार सिक्खों का सर्वनाश करने के लिए तुली हुई थी । अपने इस आशय की पूर्ति के लिए उसने गश्ती सैनिक टुकड़ियाँ नियुक्त कर रखी थी । ये सैनिक टुकड़ियाँ ढूँढ ढूँढ कर सिक्खों को गिरफ्तार कर लेती और डट कर मुकाबला करने वालों को मौत के घाट उतार देती । मुगल सरकार का यह दमन चक्र लाहौर नगर के इर्द - गिर्द कुछ अधिक कठोर था । ऐसी अवस्था में बाघ सिंह ने यह उचित समझा कि हलो ग्राम त्यागकर जालन्धर में बसा जाये । उन दिनों सरदार कपूर सिंह जी अपने जत्थे समेत करतारपुर नगर (दोआबा) के पास डेरा डाले बैठे थे । सरदार बाघ सिंह जी प्राय: सरदार कपूर सिंह जी से मिलते रहते और तत्कालीन राजनीतिक स्थिति पर विचार विमर्श करते । संयोग से श्री गुरू नानक देव जी का प्रकाश पर्व निकट आ गया । अत: बाघ सिंह के मन में यह भावना जागृत हुई कि यह एक बड़ा शुभ अवसर होगा, यदि उसकी

बहन और भान्जे जस्सा सिंह को गुरू पर्व के कार्यक्रमों में कीर्तन करने का सौभाग्य प्राप्त हो जाये। उने उचित समय देखकर सरदार कपूर सिंह जी को अपने मन की इच्छा बताई । सरदार कपूर सिंह जी ने माँ पुत्र द्वारा गाई गई गुरूवाणी सुनी तो वे बहुत प्रभावित हुए । उन्होंने गुरू पर्व उत्सव में माँ पुत्र को कीर्तन करने का अवसर प्रदान किया । समस्त संगत ने माँ पुत्र द्वारा गाई 'आसा की वार' नामक वाणी का दोतारे वाद्य से कीर्तन श्रवण किया और प्रसन्न हृदय से उनकी प्रशंसा की । संगत के आग्रह करने पर सरदार कपूर सिंह जी ने जस्सा सिंह को अपने पास ठहरा लिया । जस्सा सिंह की आयु उस समय लगभग 12 वर्ष की थी । इतनी छोटी अवस्था में उसके नियमित जीवन सुशील स्वभाव, सेवाभाव इत्यादि शुभ गुण देखकर सरदार कपूर सिंह जी अत्यन्त प्रभावित हुए ।

एक दिन उन्होंने बाघ सिंह और उनकी बहन से जस्सा सिंह को पंथ की सेवा हेतु मांग लिया । सरदार कपूर सिंह जी का आग्रह, वे टाल नहीं सके । अत: उन्होंने बड़ी नम्रतापूर्वक निवेदन किया कि ठीक है, हम अपने इस लाल को आपकी झोली (शरण) में डालते हैं । अब आप इसे अपना ही पुत्र मानें । वहाँ उपस्थित संगत ने तुरन्त 'सत श्री अकाल' की जय जयकार की और गुरूग्रंथ साहब के समक्ष अरदास (प्रार्थना) की । उसी दिन से जस्सा सिंह की ख्याति सरदार कपूर सिंह के सुपुत्र में होने लगी ।

सरदार कपूर सिंह जी ने जस्सा सिंह को घुड़सवारी, तलवार चलाने, नेजाबाजी और धनुर्विधा के प्रशिक्षण हेतु युद्धकला में निपुण व्यक्तियों के सुपुर्द किया। उन्होंने उसे युद्ध के दाँव पेंच भी सिखा दिये । इस प्रकार नियमित रूप से कसरत करने के कारण जस्सा सिंह एक बलिष्ठ युवक बन गया । उसकी भुजाओं में इतना बल आ गया कि वह 16 सेर वजन की गदा हाथ में थाम कर इस प्रकार घूमता, मानों वह एक हल्का सा तिनका है ।

कुछ वर्षो पश्चात् सरदार कपूर सिंह जी ने स्वयं पाँच प्यारों में शामिल होकर जस्सा सिंह को 'खण्डे का अमृत छकाया' और खालसे की रहित मर्यादा में दृढ़ रहने का आदेश दिया । इस प्रकार जस्सा सिंह सिक्खी में परिपक्व होता चला गया । कहीं जस्सा सिंह को अपनी उपलब्धियों पर अभियान न हो जाये, इसलिए कपूर सिंह जी बहुत सतर्कता से उसे नम्रता का पाठ पढ़ाते और उसे इसके लिए कुछ ऐसी सेवाएं करने को कहते, जो निम्न स्तर की होती ।

पानी ढोना व लीद उठाना इत्यादि कार्य उसे सौंपे जाते । आज्ञाकारी जस्सा सिंह भी प्रसन्नचित भाव से अपने सभी उत्तरदायित्वों का पालना करता । इन कामों से जस्सा सिंह के हृदय में भ्रातत्व की भावना उत्पन्न हो गई । उसकी दृष्टि में कोई छोटा बड़ा नहीं रहा ।

दल खालसा के जवानों में यह बात हर कोई जानता था कि जस्सा सिंह युद्ध कला और गुरूजनों की शिक्षा प्राप्त कर इतना प्रवीण हो चुका है कि वह रणभूमि में कवचन धारण करने में संकोच करता है और अपने युवक साथियों को भी समझाता कि कवच धारण करने से लड़ने में बाधा आती है । उसका मनोबल इतना विकसित हो गया था कि यह मृत्यु को एक खेल समझने लगा था ।

जस्सा सिंह शूरवीर होने के बावजूद बड़े नम्र स्वभाव का था । वह खुलासा दीवानों (सम्मेलनों) में उपस्थित जनसमूह की हर प्रकार से सेवा करने में अपना गौरव समझता था । वह सत्संग में पंखा झूलाने व लंगर में जूठे बर्तन मांझने में अपना कल्याण समझता था । गुरूवाणी के पाठ और शब्द कीर्तन के समय भी सबसे आगे रहता । उसने इन सभी गुणों के कारण सरदार कपूर सिंह जी तथा अन्य वयोवृद्ध नेताओं का मन जीत लिया ।

सरदार कपूर सिंह जी की अनुशासनप्रियता के कारण जस्सा सिंह बड़ा कर्त्तव्यपरायण सिद्ध हुआ । एक रात मूसलाधार वर्षा होने लगी । वायु की तीव्रगति और कौंधती बिजली ने वातावरण को भययुक्त बना दिया । नवाब कपूर सिंह जी ने लम्बी आवाज लगाकर पुकारा – 'है कोई ! इस समय पहरे पर सन्तरी ?' तभी उत्तर में जस्सा सिंह ने कहा – 'मैं हूँ, हजूर' । निकट आकर वयोवृद्ध सेनानायक कपूर सिंह जी ने अति प्रसन्नता प्रकट की और जस्सा सिंह की पीठ थपथपाते हुए कहा – जवाना ! तू निहाल । अगली सुबह, नवाब कपूर सिंह जी ने समस्त सैनिकों के सामने जस्सा सिंह को बुलाकर उसके कर्त्तव्यपरायणता की सराहना की और उसे पदोन्नति देकर अपने प्रबंधक पद पर आसीन कर दिया ।

नवाब कपूर सिंह जी के साथ सदा रहने के कारण जस्सा सिंह को इस बात का ज्ञान हो गया कि सिक्ख जत्थों का निर्माणकिस ढँग से किया जाता है और इनकी सँख्या कम करने के क्या कारण हैं । जब खालसा पंथ में दो दल स्थापित हो गये तो वह तब भी नवाब साहब के बुड्ढा दल के साथ ही जुड़े रहे । इस प्रतिक्रिया के समय जस्सा सिंह को दीवान दरबारा

सिंह जी के अतिरिक्त संगत सिंह खजांची, हरी सिंह, देवा सिंह, बदन सिंह, केहर सिंह, बज्जर सिंह, घनघोर सिंह और अमर सिंह जैसे वयोवृद्ध, मुख्य सिक्ख नेताओं के सम्पर्क में आने का अवसर मिला । इन लोगों के साथ रहने से उसे सिक्खों के राजनीतिक एवं सामाजिक लक्ष्यों का ज्ञान होना स्वाभाविक सी बात थी । जस्सासिंह को अब तक इस बात का पूर्ण ज्ञान हो चुका था कि सिक्ख धर्म ऐसी धारणाओं का प्रतीक है, जो एक से मानवीय भाईचारे की स्थापना में संलग्न हों । यह भ्रातवाद एकदम नैतिक सिद्धान्तों पर स्थित हो । इन परिस्थितियों में न तो कोई किसी को डराये और न ही दूसरों से भयभीत हो, सामाजिक स्तर पर किसी प्रकार का भेदभाव न हो । इससे ईश्वर के सर्वव्यापक, सर्व शक्तिमान एवं निराकार रूप पर अटूट भरोसा हो तथा प्रत्येक प्राणी मात्र को उस दिव्य ज्योति का अंश समझने की सद्भावना हो । ऐसे समाज के निर्माण हेतु राजनैतिक शक्ति की प्राप्ति अति आवश्यक शर्त थी । युवक जस्सा सिंह ने इस बात का अनुभव कर लिया था।

युवक जस्सा सिंह के समक्ष तत्कालीन मुगल साम्राज्य सिक्ख पंथ के समूल नाश के लिए कमर कसे खड़ा था । यह चुनौति जस्सा सिंह ने स्वीकार की और दृढ़ निश्चय के साथ अकाल पुरूष की ओट लेकर लक्ष्य की पूर्ति हेतु लम्बे संग्राम में कूद पड़ा ।

जस्सा सिंह की वेशभूषा से उसके स्वभावकी गम्भीरता और उन्नत मन के दर्शन होते थे । माता सुन्दरी जी की शरण में रहने के कारण वह दिल्ली के मुगलों की भान्ति पगड़ी बाँधने लगा था और दिल्ली वासियों की तरह वह भी धारावाहिक हिन्दुस्तानी (हिन्दी) भाषा का प्रयोग करता था । इसी कारण कुछ मस्खरे सिक्ख उसे 'हमको - तुमको' कहकर बुलाते थे। जस्सा सिंह अभी उभरता हुआ जवान था । वह कई बार इस परिहास के कारण परेशान होकर आँसू भरे नेत्रों से नवाब कपूर सिंह के पास जाकर कहा - 'मुझ से दाना नहीं बांटा जा सकता' । ऐसे में नवाब साहब उसे धीरज बंधाते हुए कहते - 'घबराओ नहीं, तुम तो हज़ारों लोगों को दाना (भोजन) प्रदान करोगे और सबसे बड़े भण्डारी बनोंगे । यह (सिक्ख) पंथ गुरू की लाड़ली फौजें हैं । 'सेवा से ही मेवा' मिलता है । मुझ जैसे (तुच्छ) व्यक्ति को भी 'गरीब निवाज़' (दीनबन्धु) पंथ ने 'नवाब' बना दिया है, क्या मालूम तुम्हें बादशाही ही बख्श दे ।

समाप्त